इकाई 24 प्रथम विश्व युद्ध के बाद की अर्थव्यवस्था

इकाई की रूपरेखा

24.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद :

- अंतर्युद्ध काल में कुछ महत्वपूर्ण उद्योगों में हुई अधिक प्रगति के विषय में आपको ज्ञान होगा,
- आप उस कारण की व्याख्या कर सकते हैं जिससे इस काल में कृषि ठहराव आया और "चावल दंगों" के प्रति सरकार की प्रतिक्रिया की भी,
- आप जापान में दोहरी संरचना के निर्माण को समझ जाएंगे, और
- इस काल में आपको वित्तीय जमाव, बड़े व्यापारिक घरानों तथा जापान के विदेशी व्यापार का भी बोध हो जाएगा।

24.1 प्रस्तावना

दोनों विश्व युद्धों के बीच के समय को अर्थात् 1918 से 1937 तक के समय को अंतर्युद्ध का समय कहा गया है।

जापान की जिस अर्थव्यवस्था का 1885 से आधुनिकीकरण शुरू हुआ था, वह अंतर्युद्ध के समय में आर्थिक विकास के कुछ सुनिश्चित पक्षों के दृष्टिकोण से भटकती प्रतीत होती है। प्रथम विश्व युद्ध ने औद्योगिक विकास को काफी प्रोत्साहित किया था लेकिन यह काफी संक्षिप्त था। शीघ्र ही जापान में कृषि में ठहराव पैदा हो गया। विदेश व्यापार में भी संकट आ गया। ऐसा इसलिए हुआ कि सरकार पर सेना का नियंत्रण था और इस कारण से जारी की गई आर्थिक नीतियों में जनता के हितों को ध्यान में नहीं रखा गया था। यही वह समय

था जबकि अर्थव्यवस्था का दोहरा ढांचा अस्तित्व में आया और जापान में अर्थव्यवस्था का यह तंत्र आज तक जारी है। इस इकाई में ऐसी कई समस्याओं का विवेचन किया गया है जो अंतर्युद्ध के दौरान जापान में आर्थिक विकास से जुड़ी थीं। औद्योगिक विकास **जैबात्सू** की भूमिका, विदेशी व्यापार तथा कृषि की स्थिति—ऐसे कुछ विषय हैं जिनका विवेचन इस इकाई में किया गया है।

24.2 युद्ध के कारण अर्थव्यवस्था का उत्थान

इकाई 20 में हम पहले ही, जापान तथा प्रथम विश्व युद्ध के विषय में विवेचन कर चुके हैं। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान जापान की अर्थव्यवस्था के मुख्य पक्षों की हम संक्षिप्त विवेचना करेंगे क्योंकि ये पक्ष अंतर्युद्ध काल के दौरान के औद्योगिक विकास से आंतरिक तौर पर संबंधित हैं। प्रथम विश्व युद्ध ने जापान के लिए कुछ समस्याएं पैदा कर दी थीं। जैसे कि विदेश व्यापार में रुकावटें पैदा होने लगी तथा ऋणों का आदान-प्रदान भी प्रभावित हुआ क्योंकि यह सब लंदन संचालित होता था। ब्रिटेन के पूंजी बाजार में भी अव्यवस्था फैल गई जिसके कारण एक संकट पैदा हो गया। लेकिन जहां तक जापान का प्रश्न है, उसके हित में कुछ चीजों में तेजी के साथ परिवर्तन हुआ। उसकी अर्थव्यवस्था में एक ऐसे आर्थिक विकास का उत्कर्ष हुआ जो 1920 तक चला। प्रथम विश्व युद्ध में जापान मित्र राष्ट्रों के साथ था। लेकिन यह युद्ध एशिया में बहुत अधिक नहीं लड़ा गया और इसी कारण से जापान को अधिक सैन्य व्यय नहीं करना पड़ा।

युद्ध के कारण जापान ने अचानक महसूस किया कि वह अपने निर्यातों को बढ़ा सकता है। यूरोप के उद्योगों में युद्ध की आवश्यकताओं के लिए उत्पादन किया जा रहा था और जापान युद्ध में प्रत्यक्ष तौर पर बहुत कम शामिल था, इसलिए जापान ने बहुत से निर्यात अवसरों का लाभ उठाया। उदाहरणार्थ, जापान युद्ध सामग्री की आपूर्ति करने वाला प्रमुख देश हो गया। जापान के जहाजों की मांग भी काफी बढ़ गई। यही वे दिन थे जबकि जापान के सूती वस्त्रों ने भारत में अपना मजबूत आधार बना लिया।

वास्तव में इस समय जापान में विदेशी बाजारों का बहुत अधिक प्रसार हुआ था। निर्यात में वृद्धि हुई, लेकिन उत्पादन मांग के अनुरूप नहीं हो रहा था। यहां तक कि संपूर्ण श्रम एवं उत्पादन क्षमता को गतिशील कर दिए जाने के बावजूद भी निर्यात की बढ़ती मांग को पूरा नहीं किया जा सका।

जापान के निर्यात व्यापार में होती अपार बृद्धि के कारण भारी माल तथा मशीनों के आयात की मांग बढ़ी। लेकिन, जिन देशों से ये आयात किए जाते थे, वहां पर युद्ध के कारण निर्यात पर प्रतिबंध था और इस तरह से जापान में आयात-निर्यात के समक्ष न हो सका। इसके फलस्वरूप निर्यात का विशाल लाभ एकत्रित हो गया। उदाहरण के तौर पर यह कहा जा सकता है कि 1911 से 1914 के बीच के वर्षों में आयात में निर्यात की अपेक्षा 6 करोड़ 50 लाख येन प्रति वर्ष वृद्धि हो रही थी। लेकिन बाद के वर्षों में निर्यातों में बढ़ोत्तरी के कारणवश, जापान के निर्यात में आयात की अपेक्षा 35 करोड़ 20 लाख येन की प्रति वर्ष वृद्धि हुई। कुल मिलाकर निर्यात 1913 की अपेक्षा 1918 में तीन गुना हो गया।

इस समय में जापान के जहाजों की मांग बढ़ गई और माल भाड़े में भी तेजी के साथ वृद्धि हुई, जिससे और अधिक मुनाफा हुआ। जहां जापान के जहाज 1914 में मात्र 15 लाख टन माल की ढुलाई करते थे वे 1918 में 30 लाख टन माल की ढुलाई करने लगे। ठीक इसी समय में भाड़े से होने वाली आमदनी 4 करोड़ येन से बढ़कर 45 करोड़ येन हो गई। लेकिन 1920 के आते-आते युद्ध से होने वाले इस अथाह मुनाफे में कमी होने लगी।

24.3 अंतर्युद्ध काल में औद्योगिक विकास

औद्योगिक उत्कर्ष के अंत के बावजूद भी जापान में कुछ ऐसे निश्चित उद्योग थे जिनका लगातार विकास होता रहा। आगामी उपभागों में हम कुछ उद्योगों के विषय में विवरण करेंगे।

24.3.1 विद्युत उद्योग

जापानी उद्योग में उत्पादक क्षमता में पर्याप्त वृद्धि को केवल उसी समय महसूस किया गया जिस समय प्रथम विश्व युद्ध के बाद मशीनों के आयात की आवश्यकता हुई। अंतर्युद्ध के दौरान औद्योगीकरण की प्रक्रिया में विद्युत उद्योग ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। विद्युत के विशाल ट्रांसमिशन तथा जेनरेटर 1907 से ही कार्यरत थे। विद्युत प्रयोग के द्वारा उत्पन्न की जाने वाली शक्ति का मूल्य के द्वारा उत्पन्न की जानेवाली शक्ति से आधा था। इसी कारणवश विद्युत शक्ति के लिए उद्योगों की ओर से भारी मांग की जा रही थी। और प्रथम विश्व युद्ध शुरू होने से पूर्व ही विद्युत शक्ति उद्योग भलीभांति स्थापित हो चुके थे। विद्युत शक्ति उद्योग का विकास तकनीकी प्रगति तथा युद्ध के दौरान बढ़ती विद्युत शक्ति की मांग के कारण संभव हो सका।

तालिका 1 में सन् 1914 से 1940 तक उत्पादित की गई विद्युत शक्ति के आंकड़े दिए गए हैं। हम देखते हैं कि विद्युत उत्पादन बड़ी तेजी के साथ बढ़ा। तालिका के दूसरे भाग में विद्युत की सापेक्ष कीमतों को दिया गया है। जिस समय हम विद्युत शक्ति के दाम को कोयले के दाम से विभाजित करते हैं तब हमें विद्युत की सापेक्ष कीमतों का पता चलता है। उद्योग में गति शक्ति को विद्युत या कोयले के प्रयोग के द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है। तालिका को देखने पर हमें यह भी मालूम पड़ता है कि विद्युत की सापेक्ष कीमतों में वर्ष प्रति वर्ष कमी होती गई।

तालिका-1 : अंतर्युद्ध काल में जापान मे विद्युत उत्पादन तथ मूल्य

वर्ष	उत्पादित विद्युत (मिलियन किलोवाट)	सापेक्ष मूल्य (विद्युत शक्ति मूल्य) कोयले का मूल्य
1914	1,791	2.58
1915	2,217	2.23
1920	4,669	1.58
1925	7,093	1.81
1930	15,773	1.43
1935	24,698	0.95
1940	34,566	0.83

अंतर्युद्ध के दौर की समाप्ति पर जापान में विद्युत का घरेलू उपयोग 90 प्रतिशत घरों में होने लगा था। लेकिन इसके वास्तविक प्रभाव को उद्योगों में देखा जाना चाहिए। विद्युत के कुल उत्पाद का दो-तिहाई भाग खान एवं निर्माण उद्योगों में उपयोग होता था। 1926 तथा 1936 के बीच के वर्षों में उद्योगों में खपत होने वाली विद्युत की मात्रा में तीन गुना वृद्धि हुई। सबसे अधिक विद्युत की खपत रसायनिक उद्योगों में और फिर हथियार निर्माण, खान एवं कपड़ा उद्योगों में होती थी।

विद्युत के प्रसार एवं सुगम उपलब्धि ने उद्योग पर कई प्रभाव डाले। जैसे-जैसे लंबी दूरी के शक्ति ट्रांसमिशनों की तकनीक में सुधार हुआ वैसे-वैसे विद्युत के मूल्यों में कमी आती गई। अब विद्युत मात्र प्रकाश का साधन न रह गई थी बल्कि अब यह उन मशीनों को

संचालित करने का मुख्य साधन बन गई थी जो ऊर्जा के बहुत से स्रोतों को कई उद्योगों के द्वारा प्रयोग की जाने वाली यांत्रिकी ऊर्जा में परिवर्तित करती थीं। विद्युत मोटरों पर निर्भरता बढ़ने लगी। विद्युत का मुख्य गतिशीलकर्ता के तौर पर तेजी के साथ प्रसार हुआ। 1929 तक लगभग 87 प्रतिशत फैक्ट्रियों में विद्युत मोटरों का उपयोग होने लगा। विद्युत ; लागू कर दिए जाने से उत्पादन के ऐसे परंपरागत साधनों को परिवर्तित करने के अवसर प्राप्त हुए जिससे बहुत से सामानों के लिए बढ़ती मांग की कोई जरूरत न रह गई थी। उदाहरण के तौर पर हाथों से संचालित किये जाने वाले हथकरघे को अब बिजली के द्वारा चलाया जाने लगा। सस्ती विद्युत तथा विद्युत मोटरों के विसर्जन के कारण विदेशी मशीनों को लागू करना संभव हो सका। उस समय के विकसित देशों में औद्योगिक क्रांति उपभोग की वस्तुओं को पैदा करने वाली मशीनों की खोज के कारण संभव हो सकी थी। जापान के संदर्भ में यह विद्युत प्रसार ही था जिसके कारण उपभोग की वस्तुओं के उत्पादन के लिए नवीन तरीकों का प्रयोग किया जा सका और इस तरह से जापान का एक औद्योगिक रूपांतरण संभव हुआ।

विद्युतीकरण के प्रसार का दूसरा प्रभाव यह था कि जिन उद्योगों ने विद्युत का उपयोग प्राथमिक उत्पाद के तौर पर किया उनकी संख्या में भी तेजी से वृद्धि हुई। विद्युत रसायन उद्योग तथा विद्युत पर आधारित तेल शोधक उद्योग इसके उदाहरण हैं। अक्सर ऐसा कहा जाता है कि यदि जल विद्युत स्टेशनों का निर्माण किया जाए तब काफी बड़ी मात्रा में विद्युत शक्ति उपलब्ध होगी। फिर इस तरह से उत्पादित की गई अधिक विद्युत शक्ति की खपत करने के लिए उद्योगों का निर्माण किया जाएगा। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान रसायन उद्योग के उत्पाद का आयात करना असंभव हो गया। इसी कारण से जापान में इस समय में विद्युत शक्ति का प्रयोग करने वाले सोडा, कार्बाइड तथा अमोनियम सल्फेट जैसे रसायनिक उद्योगों की स्थापना की गई।

24.3.2 भारी एवं रसायन उद्योग

भारी उद्योग के अंतर्गत स्टील, गैर-लौह धातु तथा मशीनी उद्योग आते हैं। सन् 1915 में कुल औद्योगिक उत्पादन का 29 प्रतिशत भारी एवं रसायन उद्योग का उत्पादन था और सन् 1920 में बढ़कर यह 33 प्रतिशत हो गया। 1925 में इस उत्पादन में 25 प्रतिशत तक गिरावट आई और 1930 में फिर एक बार यह 33 प्रतिशत हो गया। इस उत्पादन वृद्धि की यह दर जारी रही, 1935 में यह 44 प्रतिशत था तो 1940 में इसका भाग 59 प्रतिशत हो गया। भारी तथा रसायन उद्योग में युद्ध के दौरान तथा बाद में आई इस संपन्नता का कारण आयातों में पैदा हुई रुकावटें थीं। युद्ध के बाद पुनः प्रारम्भ हुए व्यापार के कारण ह्रास हुआ। 1925 में 24 प्रतिशत की कमी आई।

तालिका-2 : भारी और रसायन उद्योग में कुल उत्पादन
औद्योगिक उत्पादन (मिलियन में)

वर्ष	कुल औद्योगिक उत्पादन	भारी तथा रसायन उद्योग उत्पादन	कुल औद्योगिक उत्पादन में भारी तथा रसायन उद्योग का भाग (प्रतिशत में)
1915	2,880	840.5	29.2
1920	9,579	3,202.7	33.4
1925	10,100	2,390.5	23.7
1930	8,838	2,896.0	32.8
1935	14,968	6,516.0	43.5
1940	33,252	19,569.0	58.8

भारी तथा रसायन उद्योगों के लिए रसायनिक खादों के निर्माण कार्यों में उपयोग किए जाने

उदाहरण भारी एवं रसायनिक उद्योगों की प्रगति के रूप में दिया जा सकता है। हम इसके विषय में विस्तृत तौर पर विवेचन करेंगे। 1920 के दशक में स्टील की वस्तुओं के घरेलू उत्पादन में चार गुना वृद्धि हुई। विश्वव्यापी आर्थिक मंदी के प्रारंभ के साथ ही स्टील की वस्तुओं के आयातों में तेजी से गिरावट आई लेकिन स्टील के उत्पादन में निरंतर वृद्धि होती रही। इसके कारणवश स्टील क्षेत्र की मूलभूत निर्माण उत्पाद के उपलब्धकर्ता के तौर पर स्थापना हुई। इसी के साथ-साथ आयातित स्टील पर निर्भरता भी कम होने लगी। विशाल निर्माण कार्यों तथा रेलवे लाइन के बिछाने के काम ने लगातार स्टील की मांग को बनाए रखा लेकिन, इस तरह की मांग मशीन उद्योग के लिए बरकरार न रह सकी।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान जापान ने भारी तथा रसायन उद्योग में जो निवेश किया था उसके परिणाम युद्ध के बाद प्राप्त होने शुरू हुए। युद्ध के दौरान आयात में आई रुकावटों के कारण नए भारी तथा रसायन उद्योगों को प्रोत्साहन मिला। इस क्षेत्र में विशाल स्तर पर पूंजी निवेश हुआ और 1920 के दशक में भारी तथा रसायन उद्योगों को मजबूती के साथ स्थापित कर दिया गया था।

इस संदर्भ में हम विद्युत शक्ति उद्योग, रसायन तथा हल्के मशीन उद्योगों के मध्य एक घनिष्ठतम संबंध देखते हैं। विद्युत शक्ति की भरपूर मात्रा सस्ते दामों पर उपलब्ध थी और इसी के कारणवश विद्युत रसायन तथा स्टील उद्योगों का विकास संभव हुआ।

इस समय के दौरान जापान का **औद्योगिक** विकास केवल पहले से सुनिश्चित किए गए क्षेत्रों तक सीमित न था। धातु एवं मशीन उद्योग अन्य दूसरे उद्योगों की विशाल स्तर पर सहायता करते थे और इन उद्योगों का विकास भी कुछ सुनिश्चित क्षेत्रों में हुआ। अन्य दूसरे ऐसे उद्योग जिनका विकास बाद में हुआ—इनके साथ घनिष्ठ तौर पर जुड़े थे। 1920 के दशक के दौरान हम जापान में औद्योगिक क्षेत्रों के निर्माण को पाते हैं। टोकियों—याकोहामा तथा ओसाका—कोबे को इस तरह के औद्योगिक क्षेत्रों के रूप में उद्धृत किया जा सकता है।

भारी तथा रसायन उद्योग का विकास 1930 के वर्षों में भी बराबर जारी रहा। 1920 के दशक में भी भारी तथा रसायन उद्योगों का प्रसार जारी रहा तथा आर्थिक मंदी के दौरान भी इन उद्योगों में भारी उत्पादन हुआ। 1935 तक उत्पादन में वृद्धि **विद्यमान** क्षमताओं के द्वारा स्वयं ही होती रही। लेकिन भारी तथा रसायन उद्योगों के उत्पादनों की मांग लगातार बढ़ती रही। उनकी मांग सिविल इंजीनियरिंग निर्माण तथा मशीन, जहाज निर्माण आदि जैसे उद्योगों से आती थी। इसके कारण पुनः भारी एवं रसायन उद्योगों के प्लांट का विकास हुआ और इस उद्योग में वृद्धि निम्नलिखित कारणों से हुई—

1932 तथा 1937 के बीच में ऐसे जहाजों को नष्ट कर दिया गया जो 25 वर्ष से अधिक पुराने थे। नए जहाजों के निर्माण के फलस्वरूप उनके उत्पादों की पुनः मांग हुई।

1936 तक इस उद्योग से की जाने वाली सैनिक मांग उनकी कुल मांग का मात्र 10 प्रतिशत थी। लेकिन इस उद्योग से सैनिक मांग उस समय बढ़ी जबकि सैनिक आवश्यकता के लिए युद्ध विमानों आदि से संबंधित वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि हुई।

24.3.3 सूती कपड़ा उद्योग

यद्यपि सूती कपड़ा उद्योग प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व भी महत्वपूर्ण था, लेकिन युद्ध के बाद इसमें महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। युद्ध के तुरंत बाद के वर्षों में सूती कपड़ा मिलों की संख्या में वृद्धि हुई। क्षमता की वृद्धि का संकेत मिलों एवं कंपनियों की संख्या में हुई वृद्धि से मिलता है और इसके बाद इनके सुदृढ़ीकरण की प्रवृत्ति का भी आभास होता है। 1929 के आसपास तकवों का 50 प्रतिशत स्वामित्व मात्र सात कंपनियों के पास था। लेकिन सूत कताई का कार्य कपड़ा मिलों ने प्रारंभ कर दिया जबकि इससे पूर्व जुलाहे अलग-अलग इस कार्य को करते थे। संयुक्त तौर पर कताई-बुनाई की मिल सूती कपड़ा उद्योग की एक जटिल विशेषता हो गई। इस समय कपड़ा उद्योग में महत्वपूर्ण घटना हुई। वह व्यापक विशेष प्रकार के कारखानों (पचास लूमों से ऊपर के) का प्रकट होना था और इन कारखानों में बिजली से चलने वाले करघे लगे थे तथा विदेशी बाजार के लिए कपड़े का उत्पादन करते थे।

बोध प्रश्न 1

1) जापान के औद्योगीकरण पर प्रथम विश्व युद्ध के प्रभाव की लगभग 10 पंक्तियों में विवेचना कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2) शक्ति उत्पादन में हुई वृद्धि ने औद्योगीकरण में कैसे सहायता की? उत्तर लगभग 10 पंक्तियों में दें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

24.4 अंतर्युद्ध काल में कृषि

अंतयुर्द्ध काल के दौरान जापानी कृषि में ठहराव आ गया था। कृषि में वृद्धि दर तथा कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि न हो सकी। ग्रामीण जनता के आमदनी स्तर में भी एक ठहराव पैदा हो गया था। इसी कारण उनके रहने का स्तर काफी कम था। लेकिन कृषि में आए इस ठहराव का एक सकारात्मक पक्ष भी था, कृषि तकनीकी की एक नई क्षमता का विकास हो रहा था। इसके परिणाम 1950 के बाद दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति पर ही प्राप्त हो सके।

24.4.1 पृष्ठभूमि

प्रथम विश्व युद्ध से पहले के 25 वर्षों में जापान में कृषि में तेजी के साथ विकास हुआ। स्थानीय विशेषता के साथ कृषि तकनीक में आई बहुत सी प्रगतियों का प्रसार संपूर्ण देश में हुआ। राज्य के संरक्षण में किसानों, कृषि वैज्ञानिकों तथा कृषि उत्पादनों की आपूर्ति करने वाली कंपनियों के बीच अंतःक्रिया थी और उन्होंने पहले से ही उपलब्ध तकनीक का भरपूर उपयोग किया।

लेकिन 1910 के दशक में इस स्थिति में परिवर्तन हुआ। ऐसे जमींदार जो कृषि की प्रगति में सक्रिय भूमिका अदा कर रहे थे, उन्होंने उद्योग में तेजी से हुए विकास के कारण कृषि में रुचि लेना बंद कर दिया। उनमें से बहुत से जमींदार ऐसे थे जो आमदनी का कृषि में पुनः निवेश करते रहते थे, किंतु अब उन्होंने इसके स्थान पर यह देखा कि अगर इस आमदनी का उन बहुत से उद्योगों में निवेश किया जाना जिनका तेजी के साथ विकास हुआ था–अधिक लाभदायक होगा। इसके फलस्वरूप कृषि में होने वाले सुधारों को एक धक्का लगा। पहले जमींदार लोग बहुत से प्रकार के कृषि सुधारों में रुचि लेते थे और इन सुधारों में योगदान भी करते थे। लेकिन उनकी इस निवेशात्मक भूमिका का स्थान एक दूसरी प्रक्रिया ने ले लिया। अब ऐसा प्रतीत होता था कि कृषि के उत्थान में कोई योगदान किए बगैर जमींदार लगान एकत्रित करने में रुचि रखते थे। इस तरह वह पूंजी जिसको कृषि से एकत्रित किया गया था किसी अन्य मद में निवेश कर दिया जाता।

इस समय से पूर्व पिछले दो सौ वर्षों में जिस कृषि तकनीक का विकास हुआ था, वह अपने विकास के चरम बिन्दु पर पहुंच चुकी थी और उसके द्वारा अब कृषि उत्पादन में वृद्धि करना संभव न था। उत्पादन को बढ़ाने के लिए एक नई तकनीकी की आवश्यकता थी। परंतु सरकार के कृषि अनुसंधान के केंद्र इस बिंदु तक विकसित न थे जहां पर वे पहले से ही शोध कार्यों के स्तरों को विकसित कर सकते थे। कृषि की नवीन प्रौद्योगिकी को विकसित न कर पाने की इस अयोग्यता के साथ-साथ जमींदारों के द्वारा कृषि में निवेश किए जाने वाले धन की कमी के कारण 1910 के दशक में स्वयं ही जापान की कृषि में गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो गई।

24.4.2 1918 का चावल दंगा और इसके परिणाम

औद्योगीकरण की द्रुत गति के फलस्वरूप शहरी केंद्रों में श्रम शक्ति की मांग भी बढ़ने लगी। बेहतर परिवहन तथा संचार की सुविधाओं के कारण शहरी केंद्रों के पास ही अधिकतर उद्योगों की स्थापना हुई। उद्योगों में कृषि की अपेक्षा अधिक मजदूरी होने के कारण उद्योगों में काम करने के लिए सैकड़ों लोगों ने अपने ग्रामीण क्षेत्रों को छोड़ दिया। प्रथम विश्व युद्ध का उत्कर्ष–व्यापारिक परिस्थितियों में औद्योगिक श्रमिकों द्वारा अधिक खाद्य पदार्थों की मांग की जाने लगी और यह मांग इससे पूर्व भी बढ़ चुकी थी लेकिन इस समय इस मांग ने एक विशेष स्वरूप ग्रहण कर लिया। लेकिन इसी के साथ-साथ यह वह समय भी था जबकि जापान में कृषि उत्पादनों में कमी भी हो रही थी। खाद्य पदार्थों का उत्पादन इतना अधिक था कि वह इनकी बढ़ती मांग को पूरा कर सके। खाद्य पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि मजदूरी से अधिक थी। इसके परिणामस्वरूप उस सामाजिक असंतोष की अभिव्यक्ति 1918 के चावल दंगों के रूप में हुई। यह दंगा मात्र एक छोटी सी घटना अर्थात् चावल के उच्च दामों के विरुद्ध विरोध के तौर पर शुरू हुआ। लेकिन जैसे ही इसका प्रारंभ हुआ वैसे ही यह द्रुत गति से संपूर्ण जापान में फैल गया।

विशाल भीड़ ने अनाज के भंडारों को तोड़ डाला और धनी व्यापारियों की दुकानों को लूट लिया। वास्तव में यह सामाजिक न्याय की वह लोकप्रिय अभिव्यक्ति थी जिसने दंगों को और अधिक सक्रिय बनाया। ओचामा इको ने इसकी विशेषता बताते हुये लिखा है कि–यह ''कानून की आड़ में लूट के विरुद्ध प्रतिकारात्मक'' कार्यवाही थी। जब यह समझ लिया गया कि सामाजिक समस्याओं के निदान का और कोई तरीका शेष न रह गया है तब इन दंगों का इनके समाधान के तौर पर प्रारंभ हुआ।

आमदनियों में जो विशाल असमानताएं थी उनके विरुद्ध भी जापान में आवाज को बुलंद किया गया। उस संदर्भ में जापान के एक उदार बुद्धिजीवी कावाकामी हैजूने का नाम उद्धृत किया जा सकता है। उसने यह प्रश्न उठाया कि उद्योग एवं तकनीक में हुए विकासों के बावजूद भी देश में इतने अधिक गरीब लोग क्यों हैं? ऐसा महसूस किया गया कि चावल के मूल्यों में आई तेजी का कारण शासकों का सामान्य जनों की दिन-प्रतिदिन की जिन्दगी के प्रति भावनाविहीन होना था। सरकार की इस बात के लिए आलोचना की गई कि वह संपन्न लोगों के स्वार्थों की रक्षा कर रही थी। **तोयो के जाय शिम्पो** नाम समाचार पत्र ने साम्यवादियों के विचारों को अभिव्यक्त करते हुए अपने संपादकीय में लिखा--

"कुछ लोग संपत्ति स्वामी तथा संपत्तिविहीनों के मध्य वर्ग संघर्ष के कारण के रूप में किसी लेबर समस्या को न देखकर सिर्फ दंगों को ही देखते हैं।"

निश्चय ही इस तरह के विचार लोगों के बीच विद्यमान थे। चावल दंगों का समाचार जैसे ही न्यूयार्क पहुंचा वैसे ही जापान के विशेषज्ञों ने यह विश्वास किया कि जापान में क्रांति होने वाली थी। लेकिन कोई घटना घटित न हुई और सरकार ने स्थिति पर नियंत्रण करने में सफलता प्राप्त कर ली। ये दंगे आर्थिक मुश्किलों तथा निर्धनता के विरुद्ध विरोध मात्र बने रहे। वे इस राजनीतिक व्यवस्था को चुनौती न दे सके तो इसके लिए उत्तरदायी थी। फिर भी उदारवादी बुद्धिजीवियों ने संवैधानिक प्रक्रिया में लोकप्रिय भागीदारी को विस्तृत करने की मांग की। अभी सरकार को अपनी नीति में परिवर्तन करना था। अब कृषि मंत्रालय को अकेले बिना किसी पक्षपात के किसानों से जूझना पड़ा। शहरी केंद्रों में श्रमिकों की सहायता के लिए भी प्रयास इस आशय के साथ किए गए जिससे कि उनको मजदूर संघों में शामिल होने से रोका जा सके।

चावल दंगे के जवाब में सरकार ने चावल का आयात अपने उपनिवेशों कोरिया एवं ताइवान से शुरू कया। ऐसा करने लिए कोरिया तथा ताइवान वासियों को चावल से निम्न स्तर के खाद्य पदार्थों को खाने के लिए बाध्य किया गया जिससे कि वे अपने चावल को जापान को निर्यात कर सकें। अधिक चावल को प्राप्त करने के लिए इन उपनिवेशों में जापान की उच्च पैदावार वाली चावल की किस्मों को लागू किया गया तथा सिंचाई एवं जल नियंत्रण में पूंजी निवेश भी किया गया। इस कार्यक्रम के सकारात्मक परिणाम हुए। सन् 1915 तथा 1925 के बीच कोरिया से जापान को आयात किए जाने वाले चावल में 170 से 1,212 हजार मैट्रिक टन की वृद्धि हुई। इन उपनिवेशों से आयात किया जाने वाला चावल जहां 1915 में घरेलू उत्पादन का 5 प्रतिशत था वहीं पर वह 1935 में बढ़कर 20 प्रतिशत हो गया।

लेकिन इन उपनिवेशों से आयात किए जाने वाले जिस चावल ने उस संकट की घड़ी में जापान की मदद की बाद में चलकर वह जापान के लिए एक समस्या बन गया। प्रथम युद्ध की समाप्ति पर व्यापार उत्कर्ष का अंत हो गया और खाद्य पदार्थों की मांग में भी कमी आई। लेकिन औपनिवेशिक चावल ने जापान के बाजारों को भर दिया। इसके कारण घरेलू उत्पादित चावल के दामों में गिरावट आई। कहने का तात्पर्य यह है कि कृषि आमदनी में भी गिरावट आई। अंततः विश्वव्यापी आर्थिक मंदी ने जापान के कृषि संकट को और गहरा कर दिया। कृषि की आमदनी में आई गिरावट ही मुख्य समस्या थी। इस स्थिति का सामना करने के लिए सरकार ने अनेक उपाय किए–

i) प्रथमतः सरकार ने कृषि उत्पादनों के समर्थन मूल्य को लागू किया। जिसका तात्पर्य यह था कि उत्पादनों को कम से कम मूल्य की गारंटी प्रदान की गई और कृषि उत्पादनों के मूल्यों को इनसे नीचे नहीं गिरने दिया जाएगा।

ii) दूसरे, सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में भौतिक बुनियादी ढांचे का निर्माण शुरू किया जिससे कि ग्रामीण जनता को अतिरिक्त रोजगार के अवसर उपलब्ध हो सकें।

iii) तीसरे, सरकार ने उन किसानों को कर्ज दिया जो पहले से ही ऋण-ग्रस्त थे। सरकार इस कर्ज पर जो ब्याज वसूल करती वह ग्रामीण महाजनों की तुलना में काफी कम था। इसका तात्पर्य यह था कि ब्याज तथा ऋण की पुनः अदायगी के भार को काफी कम कर दिया गया।

iv) चतुर्थ, सरकार ने कृषि सहकारी समितियों के निर्माण का समर्थन किया जिससे किसानों का शोषण बहुत से बिचौलियों के द्वारा न किया जा सके।

सरकार के इन सभी प्रयासों के बावजूद भी कृषकों की आमदनी में पर्याप्त वृद्धि न हो सकी। ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे निर्धन वे कृषक थे जो जमींदारों से भूमि को लगान पर प्राप्त करते थे। काश्तकारी किसान जिस भूमि पर खेती करते उन्हें उसका अधिक लगान वस्तु में देना होता था। जिस समय कृषि की आमदनी के स्तरों में ठहराव आ रहा था, तब उनके लिए इन दोनों आवश्यकताओं को पूरा करना कठिन हो रहा था। इसलिए उन्होंने जमींदारों द्वारा वसूल किए जाने वाले लगान में कमी करने की मांग की। दूसरे, अब जमींदारों का

माई-बाप वाला दृष्टिकोण भी न रह गया था। उन्होंने लगान में कटौती करने से इंकार कर दिया। इसके फलस्वरूप काश्तकार अपना संगठन बनाने के लिए इकट्ठा होने लगे जिससे कि वे मजबूत स्थिति में होकर अपनी मांगों को मनवाने के लिए सौदेबाजी कर सकें। इसके फलस्वरूप जमींदारों ने इसका उत्तर काश्तकारों को उनकी जमीनों से बेदखल करके देना शुरू किया। इस समय में जापान में अनेकों हिंसा की घटानाएं हुई और काश्तकारी झगड़ों में भी व्यापक तौर पर वृद्धि हुई।

सरकार ने काश्तकारों की सहायता करने के लिए सस्ती ब्याज दरों पर भूमि को खरीदा किंतु उनकी समस्या को हल करने के लिए ये प्रयास अपर्याप्त थे।

अंतर्युद्ध के दौरान किसान परिवारों की संख्या लगभग 55 लाख पर ही स्थिर बनी रही। जमीन के वितरण का आकार भी लगभग एक समान बना रहा। छोटी जमीनों तथा बड़ी जमीनों की संख्या में थोड़ी कमी आई। पहले अन्य सभी समयों की भांति इस समय भी चावल ही मुख्य फसल थी। जापानी कृषि में जो वृद्धि स्पष्ट हुई वही चावल के उत्पादन में हुई वृद्धि के रुझानों को स्पष्ट करती हैं। आधे से अधिक कृषि योग्य भूमि पर चावल की खेती ही की जाती थी।

इस समय में कृषि में उत्पादनों की किस्मों में भी वृद्धि हुई। सब्जी की अधिक किस्मों को लागू किया गया। फलों की खेती तथा मुर्गी पालन में भी वृद्धि हुई। इससे शहरी आबादी की आमदनी में हुई वृद्धि की अभिव्यक्ति होती है क्योंकि वे ही ऐसे प्रमुख लोग थे जो इन क्षेत्रों में पूंजी निवेश करते थे। उर्वरक के प्रयोग में भी वृद्धि हुई। कई प्रकार की रसायनिक खादों का आयात किया जाता था। उदाहरण के लिए, पश्चिमी देशों से अमोनियम सल्फेट का आयात होता था।

24.4.2 रेशम उत्पादन

इस समय के दौरान कृषि में चावल के बाद सबसे महत्वपूर्ण उत्पादन कच्चे रेशम का था। रेशम के उत्पादन के कार्य का विकास कृषि में अन्न उत्पादन के बाद एक प्रमुख दूसरे कार्य के रूप में हुआ। रेशम की बढ़ती विश्वव्यापी मांग के कारण रेशम-उत्पादन उद्योग का विकास द्रुत गति के साथ हुआ और 1914 तथा 1929 के बीच रेशम उत्पादन में तीन गुना वृद्धि हुई।

रेशम के कीड़ों का उत्पादन बसंत ऋतु अर्थात् जापान में अप्रैल से जून तक किया जाता था। लेकिन इसी के साथ-साथ चावल एवं अन्य फसलों के उत्पादन का कार्य भी चलता रहता था। दोहरी श्रम मांग होने के कारण रेशम के कीड़ों के उत्पादन को अधिक समय नहीं दिया जा सकता था, इसलिए गर्मी में रेशम का उत्पादन करने वाले कीड़ों पर (रेशम के कीड़ों की ऐसी किस्म जो गर्मी एवं शरद ऋतु में रेशम की उत्पादन कर सकते हों) अन्वेषण निरंतर होता रहा—

- एक ऐसी नवीन युक्ति को तैयार किया गया जिसके अंतर्गत रेशम के कीड़ों के जनन को इच्छानुसार बढ़ाया जा सके।
- रेशम के कीड़ों के जनन की एक कृत्रिम विधि को विकसित किया गया।
- कम मृत्यु दर वाली कीड़ों की उच्च किस्मों को लागू किया गया।

इन सभी विधियों को संयुक्त तौर पर गर्मी आगमन तकनीक का नाम दिया गया और इससे उत्पादन में काफी वृद्धि हुई।

इस नई तकनीक ने किसानों को अनेक प्रकार के लाभ प्रदान किये। इन सब में महत्वपूर्ण यह था कि जो श्रमिक गर्मी एवं शरद ऋतुओं में, बेकार घुमते रहते थे, उनको इस नई तकनीक ने काम उपलब्ध कराया। इस यंत्र का वर्ष में दो बार उपयोग किया जा सकता था। इस तकनीक ने निश्चित रूप से एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की और इस वास्तविकता को इस तरह से देखा जा सकता है कि 1920 में रेशम के उत्पादन का आधा इस विधि के द्वारा ही किया जाता था।

1929 में खेती करने वाले सभी परिवारों का 40 प्रतिशत द्वितीय रोजगार के तौर पर रेशम

उत्पादन के कार्य में लगा रहता था। कताई मिलों के कारण महिला श्रमिकों की मांग भी की जाने लगी। इस कार्य की पूर्ति मूल तौर पर कृषक परिवारों की महिलाओं के द्वारा ही की जाती थी। रेशम उत्पादन के द्वारा होने वाली आमदनी तथा महिलाओं के द्वारा कताई मिलों में कार्य करके प्राप्त की जाने वाली मजदूरी किसान की नकद आमदनी का मुख्य भाग हो गयी। रेशम उत्पादन की मुख्य विशेषता यह थी कि इसने धन के निवेश को अपरिहार्य नहीं बनाया। इस दूसरे कार्य के द्वारा किसानों को जो आमदनी हुई उससे वे गरीबी का शिकार होने से बच गए। इसके फलस्वरूप अब रेशम उत्पादन पर अधिक जोर दिया जाने लगा।

जहां तक रेशम के मूल्यों का प्रश्न है वे युद्ध के दौरान काफी ऊंचे बने रहे परंतु युद्ध के बाद आई मंदी में उनमें कमी आई और बाद में पुनः उनमें वृद्धि हुई। 1930 में जापान के निर्यातों का अमेरिकी बाजार धराशायी हो गया। दुर्भाग्यवश जापानी किसानों के लिए रेशम के दामों में भी उसी समय भारी गिरावट आई जबकि चावल के मूल्यों में भी कमी हुई। जिसका कुल परिणाम यह हुआ कि किसानों ने अपनी मुश्किलों के लिए राजनीतिज्ञों तथा जैबात्सू को उत्तरदायी ठहराया। इस विश्वास के कारण सेना में ग्रामीण क्षेत्रों से खूब भर्ती की गई। इस तरह की भावनाओं ने सैन्यवाद की वृद्धि की प्रवृत्ति को खूब बढ़ावा दिया जिनको सेना पसन्द नहीं करती थी। (देखें इकाई 23)।

बोध प्रश्न 2

1) 1918 के चावल दंगे के बाद सरकार के दृष्टिकोण की लगभग 10 पंक्तियों में विवेचना कीजिए। चावल की कीमतों को कम करने के लिए क्या प्रयास किए गए?

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2) रेशम उत्पादन में क्या-क्या तकनीकी सुधार किए गए? उत्तर लगभग 10 पंक्तियों में दें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....

24.5 दोहरे ढांचे का निर्माण

दोहरे ढांचे से तात्पर्य है कि अर्थव्यवस्था में आधुनिक तथा परंपरागत क्षेत्रों का साथ-साथ विद्यमान होना। आधुनिक क्षेत्र में उन उद्योगों से तात्पर्य है जिनमें माल का उत्पादन करने में आधुनिक तकनीकी के प्रयोग के साथ-साथ श्रम की अपेक्षा अधिक पूंजी का उपयोग किया जाता है। परंपरागत क्षेत्र में उन उद्योगों को रखा जाता है जो अपेक्षाकृत छोटे होते हैं और ये उत्पादन विधि के तौर पर अधिक पूंजी के प्रयोग के स्थान पर श्रम का अधिक उपयोग करते हैं। परंपरागत क्षेत्र में आधुनिक क्षेत्र की अपेक्षा मजदूरी बहुत ही कम होती है। यह दोहरा ढांचा उन देशों में पाया जाता है जिनका अभी हाल में औद्योगीकरण हुआ है या जिनको हम विकासशील देश कहते हैं। आधुनिक क्षेत्र में जिन नई तकनीकों को लागू किया जाता है उनमें पूंजी की अधिकता होती है अर्थात उनको श्रम की अपेक्षा पूंजी की अधिक आवश्यकता होती है। लेकिन पूंजी तथा श्रम के निश्चित किए गए संयुक्त स्वरूप को उस देश के लिए भी परिवर्तित करना संभव नहीं है जिस देश के पास पूंजी की तुलना में अधिक श्रम है।

हम पहले ही देख चुके हैं कि औद्योगीकरण के जापान के कार्यक्रम को आधुनिक तकनीकी के आधार पर किस ढंग से बनाया गया था। लेकिन ठीक उसी के साथ-साथ विकास के जापानी अनुभव में परंपरागत क्षेत्र ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इस संदर्भ में रेशम के उद्योगों को उद्धृत किया जा सकता है। जो कि 1930 के दशक तक विदेशी मुद्रा को कमाने का यह एक महत्वपूर्ण साधन था। इसके बाद 1960 के दशक के वर्षों तक श्रम प्रधान कुटीर स्तर के उद्योग विदेशी मुद्रा को कमाने का महत्वपूर्ण साधन थे। जापानी अर्थव्यवस्था में दोहरे ढांचे की स्थापना अंतर्युद्ध काल में की गई। अब हम दोहरे ढांचे के निर्माण के कारणों तथा दोहरे ढांचे की निरंतरता की विवेचना करेंगे।

जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं कि प्रथम विश्व युद्ध के बाद कृषि आमदनी में एक ठहराव पैदा हो गया था। जबकि 1920 के दशक में उसमें कुछ सुधार हुआ किंतु एक बार फिर 1927-28 के वर्ष में कृषि आमदनी में कमी आई। तब से उसमें तेजी से गिरावट आई। अगर हम महिला एवं पुरुषों की औद्योगिक मजदूरी की तुलना करें तब हम इन दोनों की मजदूरी में काफी अंतर पाते हैं। महिलाओं को उद्योग मे केवल संक्षिप्त समय के लिए कार्य करना होता था और बाद में उनको इस कार्य को छोड़ना पड़ता था। उनकी मजदूरी सामान्यतः कम ही होती थी और उनमें से अधिकतर कृषि क्षेत्र से आती थीं। महिला श्रमिकों का उद्योग में काम करने के लिए सतत प्रवाह बना रहता था और वे उन पुरुष श्रमिकों का स्थान ग्रहण करती जो वापस अपनी खेती करने के लिए लौट जाते। उद्योग उनको कम मजदूरी देते थे लेकिन इसके बावजूद भी उनके द्वारा यह सुनिश्चित किया गया कि श्रमिकों की कोई कमी न होगी। फिर भी महिला श्रमिकों की आमदनी पुरुषों की आमदनी की सहायक की बनी रही।

पुरुष श्रमिकों की स्थिति भिन्न थी। उद्योग में वे लम्बे समय तक रहकर कार्य करते। उन्होंने कृषि के साथ अपने संबंधों को पूर्णतः तोड़ दिया था और औद्योगिक मजदूर बनकर अपनी आजीविका को चलाते थे। उनकी मजदूरी महिला श्रमिकों की अपेक्षा अधिक थी। लेकिन कृषि में ठहराव की स्थिति के कारण कृषि क्षेत्र में पुरुष बेरोजगारों की संख्या बहुत अधिक थी। न तो कृषि में उनको रोजगार मिल पाया और न ही बड़े उद्योग उनको रोजगार उपलब्ध करा पाए। छोटे तथा परंपरागत उद्योगों का तेजी के साथ प्रसार हुआ क्योंकि उनको सरलता से श्रमिक उपलब्ध हो जाते थे। इसलिए प्रथम विश्व युद्ध के बाद आधुनिक उद्योग बढ़ती श्रम शक्ति की खपत न कर सका। इसके कारणवश परंपरागत क्षेत्र में रोजगार अवसरों में वृद्धि हुई। 1920 के दशक में इसके दो परिणाम हुए–

1) प्रथम थोक व्यापार, खुदरा तथा सर्विस क्षेत्रों जैसे–परंपरागत क्षेत्रों का प्रसार हुआ। हम देखते हैं कि इन क्षेत्रों में किराए के मजदूरों, मालिकों एवं परिवार सेवकों की संख्या में वृद्धि हुई। इन लोगों के पास कोई स्थायी रोजगार न होने से वे परंपरागत क्षेत्र की ओर चले गए। यह सत्य था कि परंपरागत क्षेत्र में कम मजदूरी थी फिर भी

2) दूसरा परिणाम यह था कि परिवहन संचार एवं सार्वजनिक उपयोगिताओं का प्रसार हुआ। ऐसा इस कारण से हुआ क्योंकि इस समय में विद्युत शक्ति तथा रेलवे जैसी बड़ी कंपनियों का पर्याप्त विकास हुआ। इसके साथ-साथ हम देखते हैं कि वाणिज्य तथा सर्विस उद्योगों में मजदूरों की संख्या में बड़ी वृद्धि हुई। रोजगार के विशेष क्षेत्र उपभोग वस्तुओं की बिक्री, फुटकर वस्तुओं की बिक्री, सराय, सार्वजनिक स्नान गृह, शौचालय, घरेलू सेवाएं, शिक्षा, दवाई तथा नर्सिंग थे।

इसी के कारण श्रम बाजार में दोहरा ढांचा बना। आधुनिक तथा परंपरागत क्षेत्रों में प्राप्त की जाने वाली मजदूरी में काफी अंतर था। जापान में प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व मजदूरी के अंतर पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया था। लेकिन प्रथम विश्व युद्ध के बाद यह अंतर काफी गहरा होने लगा और 1924 के बाद आधुनिक क्षेत्र तथा परंपरागत क्षेत्र में यह अंतर और तेजी के साथ फैला।

24.6 औद्योगिक केंद्रण तथा जैबात्सू

अंतर्युद्ध वर्षों के दौरान जापान में औद्योगिक एकाधिकार में काफी वृद्धि हुई। एकाधिकार से तात्पर्य उस स्थिति से है जबकि किसी विशेष उपभोग की वस्तु के उत्पादन में कुछ ही उत्पादनकर्ता शामिल हों। प्रतियोगिता के अभाव में कई बार उत्पादित वस्तु के दाम बहुत अधिक होते हैं। इन वर्षों के दौरान **जैबात्सू** की भूमिका औद्योगिक केंद्रण की थी। **जैबात्सू** से अभिप्राय विशाल व्यापारिक घरानों से है, लेकिन इन व्यापारिक घरानों के कार्य क्षेत्र एवं स्वार्थ अलग-अलग थे। इन वर्षों में जापान में **मित्सुई, मित्सुबिशी, सुमितोमो**, तथा **यासूदा** जैसे चार बड़े **जैबात्सू** थे।

1920 के दशक की कुछ वित्तीय मुश्किलों के कारण सरकार ने कुछ निश्चित उपायों को लागू किया। इसका परिणाम यह हुआ कि बैंकों की संख्या में गिरावट आई। 1918 में बैंकों की संख्या 2285 थी वह 1930 में 1913 रह गई। 1928 में **मित्सुई, मित्सुबिशी, दादू इची, सुमी तोमो** तथा **यासुदा** जैसी "बड़ी पांच" बैंकों के पास सभी सामान्य बैंकों की 34 प्रतिशत पूंजी जमा थी। इन पांच बड़े बैंकों में से चार पर **जैबात्सू** का नियंत्रण था। सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया में **जैबात्सू** की वित्तीय शक्ति में काफी वृद्धि हुई। **जैबात्सू** द्वारा औद्योगिक नियंत्रण करने के लिए बैंकिंग एवं वित्त सामरिक तौर पर महत्वपूर्ण आधार बन गए थे।

पांच बड़े बैंकों में जमा पूंजी के केंद्रण का परिणाम धन आपूर्ति की एक पूर्णरूपेण नई स्थिति के रूप में हुआ—

1) ये बड़े बैंक शायद ही छोटी या मध्यम कंपनियों को ऋण देते थे। ये विशेष प्रकार के बड़े उद्योगों को ही ऋण देते थे। बैंकों के केंद्रण के साथ ही इन नीतियों को लागू किया गया, कमजोर छोटी कंपनियों को ऋण सुविधा न थी और उनको मुश्किलों का सामना करना पड़ा। बड़े बैंक अपनी विशाल वित्तीय शक्ति के बल पर जिस भी कंपनी पर अपना नियंत्रण कायम करने की सोचते उसको अपने नियंत्रण में ले सकते थे। इनमें सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि ये बड़े बैंक **जैबात्सू** से जुड़ी कंपनियों की देखभाल करते और उन्हीं को प्राथमिकता प्रदान करते।

2) दूसरे, कोई एक विशेष **जैबात्सू** समूह के नियंत्रण तंत्र को विस्तृत करने के लिए बैंक के धन का उपयोग कर सकता था। इस तरह से बैंकों में जो जमा पूंजी थी उसका उपयोग **जैबात्सू** की ताकत को बढ़ाने में किया गया। **जैबात्सू** ने विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न कंपनियों की स्थापना की।

3) तीसरे, **जैबात्सू** से संबंधित कंपनियों के पास नियंत्रण की ऐसी शक्तियां थी जो उनकी वित्तीय पूंजी की भागीदारी से कहीं अधिक थीं। **जैबात्सू** की शक्तियां 1920 तथा 1930 के दशकों में अपने चरमोत्कर्ष पर थी किंतु इसके बाद उनका पतन शुरू हो गया।

जैबात्सू की शक्तियां केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित न थी। इसका राजनीति में भी काफी प्रभाव था। ये व्यापारिक घराने पिछले 50 वर्षों से शक्तिशाली थे। जापान की सरकार अपनी कुछ निश्चित आर्थिक गतिविधियों के लिए इन घरानों की वित्तीय मदद पर निर्भर करती थी। **जैबात्सू** ने उन **राजनीतिज्ञों के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित किए जो नीतियों** का निर्धारण करते थे। नीतियों को लागू करने के लिए वे संसाधनों तथा सहायता को उपलब्ध कराते थे। राज्य उनकी सहायता उनको महत्वपूर्ण ठेके प्रदान करके तथा राज्य की संपत्ति को उन्हें कम दामों पर बेचकर करता था। **जैबात्सू** के राजनीतिज्ञों के साथ घनिष्ठतम संबंध होने के कारण उसकी नीतिगत मामलों पर सलाह महत्वपूर्ण होती थी और ये संबंध उनके इस स्तर पर होते थे कि जहां वे सरकार के ऊपर अपने विचारों को थोप सकते थे।

इन सबका यही पर अंत नहीं हो जाता। विश्वव्यापी मंदी के दौरान किसानों एवं छोटे उत्पादनकर्ताओं को भारी नुकसान हुआ। उन्होंने अपनी कठिनाइयों के लिए **जैबात्सू** को उत्तरदायी ठहराया। सेना सरकार के द्वारा विदेशी मामलों में लिए गए कार्यों तथा सेना को आवंटित किए गए बजट को लेकर नाराज थी और वह **जैबात्सू** को भी पसंद नहीं करती थी। फिर **जैबात्सू** की जबर्दस्त आलोचना की जाने लगी। **जैबात्सू** पीछे हट गई और उसकी महत्वपूर्ण स्थिति में कमी आई। यद्यपि राष्ट्र के प्रति वफादारी के लिए उन्होंने बहुत से योगदान किए, लेकिन इस **समय से उसका द्रुत गति से पतन होने लगा।**

24.7 अंतर्युद्ध के समय में विदेश व्यापार

हम पहले ही देख चुके हैं कि प्रथम विश्व युद्ध के दौरान एवं तुरंत बाद जापान के निर्यातों में काफी तेजी से वृद्धि हुई। 1913 तथा 1929 के बीच विदेशी व्यापार में तीन गुणा वृद्धि हुई। अगर हम जापान तथा उसके उपनिवेशों के बीच हाने वाले व्यापार को शामिल करते हैं तब यह वृद्धि और भी अधिक होगी। 1914 से पूर्व औपनिवेशिक व्यापार इतना महत्वपूर्ण न था। लेकिन जैसे ही विश्व युद्ध का समापन हुआ वैसे ही यह व्यापार विदेशी व्यापार का 12 प्रतिशत हो गया और 1929 में 20 प्रतिशत। जापान का अपने उपनिवेश कोरिया एवं ताइवान के साथ व्यापार वैसे ही था जैसा कि भारत एवं इंग्लैण्ड के बीच था। जापान अपने उपनिवेशों को औद्योगिक उत्पादनों का निर्यात करता था और उनसे खाद्य सामग्री एवं कच्चे माल के आयात।

जापान का बाह्य विश्व के साथ होने वाला व्यापार इस वास्तविकता का द्योतक था कि इसका तेजी से औद्योगीकरण हो रहा था। जापान के निर्यात में औद्योगिक उत्पादन का प्रतिशत 1913 में 29 प्रतिशत था वह 1944 में बढ़कर 44 प्रतिशत हो गया। 1913 में निर्यात में कपड़े की भागीदारी अच्छी थी। 1913 के निर्यातों में सूती धागा तथा कपड़ा, कच्ची रेशम तथा रेशम के उत्पादनों की संयुक्त भागीदारी 53 प्रतिशत हो गई। जहां 1913 में इस निर्यात में कच्ची रेशम का भाग 30 प्रतिशत था वह 1929 में 37 प्रतिशत हो गया।

क्षेत्रानुसार चीन एवं संयुक्त राज्य अमेरिका को होने वाला निर्यात 1913 में 64 प्रतिशत था और वह 1929 में 67 प्रतिशत हो गया। ब्रिटिश भारत को भी 1929 में 9 प्रतिशत निर्यात होने लगा।

1929 में जापान का निर्यात 2149 मिलियन येन था और वह 1933 में वह गिरकर 1,147 मिलियन येन रह गया लेकिन 1936 में उसमें पुनः वृद्धि हुई और वह 2,693 मिलियन येन हो गया। आयातों से भी इस तरह के रुझानों का पता लगता है। तैयार औद्योगिक माल का निर्यात 1929 में कुल निर्यात का 44 प्रतिशत तथा 1936 में 59 प्रतिशत तक बढ़ गया। ठीक इसी समय में अर्ध-औद्योगिक उत्पादनों का निर्यात 43 प्रतिशत से कम होकर 27 प्रतिशत रह गया। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि कच्ची रेशम का निर्यात 1929 में 37 प्रतिशत से कम होकर 1936 में 15 प्रतिशत रह गया। कपास से तैयार माल निर्यात में

अपनी हिस्सेदारी को बनाए रख वस्त्रों का निर्यात 13 प्रतिशत से बढ़कर 18 प्रतिशत हो गया। छोटे स्तर के उद्योगों के उत्पादन के निर्यात में वृद्धि हुई। अमेरिका जहा 1929 में कुल निर्यात का 43 प्रतिशत प्राप्त करता था वहीं 1936 में गिरकर वह 22 प्रतिशत रह गया और यह कमी कच्ची रेशम के निर्यात में आई कमी के कारणवश हुई। चीन को 1929 में कुल निर्यात का 25 प्रतिशत किया जाता था और 1936 में 27 प्रतिशत जापान की सामरिक योजनाओं के कारण उसके धातु एवं मशीन निर्यात में भी वृद्धि हुई।

जापान के बढ़ते इस निर्यात का विरोध 1930 के दशक में अन्य देशों के द्वारा किया गया। 1929 में जापान के निर्यात का बड़ा भाग अन्य दूसरे विकसित देशों के उत्पादों के साथ प्रतियोगिता नहीं कर पाया। 1930 के दशक में उसने कच्ची रेशम के स्थान पर तैयार माल का निर्यात करना शुरू कर दिया। सूत से निर्मित कुछ माल ने अन्य दूसरे विकसित राष्ट्रों के निर्यातों को हटा दिया। कहने का तात्पर्य यह है कि अंतर्युद्ध के वर्षों के दौरान ब्रिटिश कपड़ा उद्योग का लगातार पतन हो रहा था और ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि भारत इस क्षेत्र में अपनी जरूरतों के लिए उत्पादन करने लगा था। इस तरह के विश्व व्यापार में मंदी के दौर में सूत से निर्मित सामानों ने जापान के निर्यातों में स्थान ग्रहण किया और इस समय ब्रिटेन का सूती कपड़ा उद्योग भयंकर तौर पर मंदी की चपेट में था।

कुल मिलाकर हम यह कह सकते हैं कि जापान ने 1930 के दशक के प्रारंभ एवं मध्य में विश्व व्यापार में होने वाले हिंसात्मक परिवर्तनों में अपने विदेश व्यापार को पर्याप्त सफलतापूर्वक समायोजित किया। अपने बाजारों एवं प्रारंभिक उपभोग वस्तुओं में आई गिरावट की कुछ भरपाई करने के लिए जापान ने नए-नए ग्राहकों तथा वैकल्पिक उपभोग वस्तुओं को प्राप्त किया।

जापानी हितों के लिए उदार स्वतंत्र व्यापार की स्थिति लाभदायक रही होगी। जापान को ऐसे निर्मित सामानों का निर्यात तथा कच्चे माल का आयात करना पड़ सकता था जिनकी वह अब गुणवत्ता को लगातार सुधारना चाहता था। लेकिन विश्व एक ऐसी स्थिति की ओर अग्रसर हो रहा था जहां पर कि स्थापित आपूतिकर्ताओं के बीच प्रभाव क्षेत्रों में विभाजित होने वाला था। यह स्थिति जापान की प्रसारवादी आर्थिक नीतियों के लिए फिट न थी। इस कारण से वह स्थिति पैदा हो गई जिसके अंतर्गत जापान में कुछ राजनीतिक समूहों ने क्षेत्रीय प्रसार की वकालत की जिससे कि जापान को एकाधिकारवादी लाभ प्राप्त हो सकते थे। जापान को अपने व्यापारिक प्रसार के लिए जिन अवरोधों का सामना करना पड़ रहा था उनके कारणवश ही राजनीतिक क्षेत्रों में प्रसारवादी विचारों को ताकत मिलने लगी।

1930 के वर्षों में सैन्यवादियों का दबाव बढ़ने लगा, (देखें इकाई 23) और सेना की मांग भी बढ़ गई। सेना के कुछ भाग अपनी मांगों को मनवाने के लिए सरकारी अधिकारियों को आतंकित करके बाध्य कर रहे थे। ऐसे प्रमुख अधिकारी जिनके विचार सेना से भिन्न थे उनकी सेना के द्वारा हत्या कर दी गई। इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ अधिकारी शांत हो गए और कुछ ने सेना की मांगों को मान लिया। हथियार उद्योग या उससे संबंधित शाखाओं में भारी मात्रा में निवेश किया गया।

1930 के दशक में कृषि में मंदी का दौर जारी रहा। कृषि को छोड़कर काफी बड़ी संख्या में श्रमिक उद्योगों में जाने लगे जिसके कारण उद्योगों में मजदूरी में और गिरावट आई। संपूर्ण अर्थव्यवस्था को युद्ध की तैयारी में लगा दिया गया जिससे महंगाई में वृद्धि हुई। जिस समय 1937 में चीन के साथ युद्ध हुआ उस समय उद्योगों को इसके लिए बाध्य किया गया कि वे युद्ध प्रयासों की पूर्ति के लिए उत्पादन करें। लोगों से यह आशा की गई कि वे युद्ध को जारी रखने के लिए अतिरिक्त समय में भी कार्य करें। खाद्य पदार्थों की आपूर्ति कम थी। आम जनता की कठिनाइयां द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति 1945 तक जारी रही।

बोध प्रश्न 3

1) आप दोहरे ढांचे से क्या समझते हैं? जापान की अर्थव्यवस्था में परंपरागत क्षेत्र की भूमिका की विवेचना कीजिए। उत्तर लगभग 10 पंक्तियों में दें।

2) धन की आपूर्ति पर **जैबात्सू** के नियंत्रण की लगभग 10 पंक्तियों में विवेचना कीजिए।

3) अंतर्युद्ध के वर्षों के दौरान जापान के विदेशी व्यापार की विशेषताओं की सूची लगभग 10 पंक्तियों में बताइए।

24.8 सारांश

इस इकाई में हमने यह बताया है कि जापान ने प्रथम विश्व युद्ध के दौरान अपने आर्थिक विकास को कैसे प्रोत्साहित किया लेकिन आर्थिक उत्कर्ष का यह दौर काफी लम्बें समय

तक न चल सका और निश्चय ही कुछ उद्योगों में मंदी आ गई। इस संदर्भ में कृषि क्षेत्र को उद्धृत किया जा सकता है। यद्यपि सरकार ने कृषि में आए ठहराव को समाप्त करने के लिए कुछ प्रयास किए लेकिन उसे सफलता न मिली। चावल दंगे के कारण अपने उपनिवेशों से चावल का आयात करना पड़ा। यद्यपि इस आयात के द्वारा तात्कालिक मूल्यों में होने वाली वृद्धि को रोकने में मदद मिली किंतु इसके दूरगामी परिणाम भी हुए। विश्वव्यापी आर्थिक मंदी के बावजूद जापान उद्योग के कुछ निश्चित क्षेत्रों जैसे कि भारी एवं रसायन उद्योग, सूती कपड़ा उद्योग तथा शक्ति उद्योग में निरंतर वृद्धि होती रही। रेशम उत्पादन में भी सुधार किए गए और यह कृषक परिवारों की आर्थिक आमदनी का एक दूसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र हो गया।

हमने जापान में दोहरे ढांचे की अर्थात् परंपरागत एवं आधुनिक क्षेत्रों के उत्थान एवं निरंतरता का भी विवेचन किया है। **जैबात्सू** ने प्रारंभ में उत्पादन की शक्तियों तथा वित्तीय पूंजी पर अपना नियंत्रण कायम किया। उसकी इन गतिविधियों ने समस्याओं को पैदा किया और जहां एक ओर उनकी आलोचना कृषकों ने की वही पर सैन्यवाद के समर्थकों ने भी उनका विरोध किया। विदेश व्यापार भी इस अंतर्युद्ध समय के दौरान फला-फूला। यद्यपि सैनिक प्रसारवादियों ने आक्रामक नीतियों का अनुसरण न केवल विदेशी मामलों में किया बल्कि देश के अंदर भी उन सभी प्रकार के विरोधों का दमन कर दिया जिन्होंने सरकार के कार्यों में सेना के हस्तक्षेप का विरोध किया। इसके बावजूद भी जापान ने आर्थिक क्षेत्र के विकास में उच्चतम बिन्दुओं को प्राप्त किया किंतु गरीब मजदूरों एवं किसानों को मुश्किलों का सामना करना पड़ा।

24.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आप अपने उत्तर का आधार भाग 24.4 को बनाइए।
2) आप अपने उत्तर का आधार उपभाग 24.3.1 को बनाते हुए शक्ति निर्माण एवं उत्पादन के बीच संबंध को भी दिखाएं।

बोध प्रश्न 2

1) चावल दंगे का संक्षिप्त में विवरण करें, कृषि क्षेत्र में किए गए सुधारों के साथ चावल के आयात को भी शामिल करें। देखें उपभाग 24.4.2

बोध प्रश्न 3

1) देखें भाग 24.5
2) देखें भाग 24.6
3) देखें भाग 24.7